

मैं साधुजन को संग चाहूँ, प्रीति तिनही सों करौं।
 मैं पर्व के उपवास चाहूँ, और आरंभ परिहरौं॥
 इस दुखद पंचमकाल माहीं, सुकुल श्रावक मैं लह्यौ।
 अरु महाव्रत धरि सकौं नाहीं, निबल तन मैंने गह्यौ॥७॥
 आराधना उत्तम सदा चाहूँ, सुनो जिनराय जी।
 तुम कृपानाथ अनाथ 'द्यानत' दया करना न्याय जी॥
 वसुकर्म नाश विकास, ज्ञान प्रकाश मुझको दीजिये।
 करि सुगति गमन समाधिमरन, सुभक्ति चरनन दीजिये॥८॥

देव-स्तुति

वीतराग सर्वज्ञ हितंकर, भविजन की अब पूरो आस।
 ज्ञान-भानु का उदय करो, मम मिथ्यातम का होय विनास॥
 जीवों की हम करुणा पालें, झूठ वचन नहीं कहें कदा।
 परधन कबहुँ न हरहुँ स्वामी, ब्रह्मचर्य व्रत रखें सदा॥
 तृष्णा लोभ बड़े न हमारा, तोष-सुधा नित पिया करें।
 श्री जिनधर्म हमारा प्यारा, तिस की सेवा किया करें॥
 दूर भगावें बुरी रीतियाँ, सुखद रीति का करें प्रचार।
 मेल-मिलाप बढ़ावें हम सब, धर्मोन्नति का करें प्रसार॥
 सुख-दुख में हम समता धारें, रहें अचल जिमि सदा अटल।
 न्यायमार्ग को लेश न त्यागें, वृद्धि करें निज आत्मबल॥
 अष्ट क्रम जो दुःख हेतु हैं, तिनके क्षय का करें उपाय।
 नाम आपका जपें निरन्तर, विघ्न-शोक सब ही टल जाय॥
 आत्म शुद्ध हमारा होवे, पाप-मैल नहीं चढ़े कदा।
 विद्या की हो उन्नति हम में, धर्म ज्ञान हू बड़े सदा॥
 हाथ जोड़कर शीश नवायें, तुम को भविजन खड़े-खड़े।
 यह सब पूरो आस हमारी, चरण-शरण में आन पड़े॥